पश्चिमी उत्तर प्रदेश के संस्कार : लोकगीतों के परिप्रेक्ष्य में

डॉ० सुमन सिंह
संगीत विभाग
आर0जी0 (पी0जी0) कॉलेज, मेरठ।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यह क्षेत्र सीमा की दृष्टि से तथा सांस्कृतिक दृष्टि से तथा सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त विशाल प्रदेश है।

उत्तर प्रदेश लोक संगीत का खजाना है, जिसमें प्रत्येक जिले में अद्वितीय संगीत परम्पराएँ है। इस राज्य को हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के 'पुखैया' अंग के गढ़ के रूप में माना जाता है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने कहा था कि लोकगीतों में धरती गाती है, पर्वत गाते है, फसलें गाती हैं। उत्सव, मेले और अन्य अवसरों पर मधुर कंठों में लोक समूह लोकगीत गाते हैं।''

उत्तर प्रदेश के लोकगीत (लोक संगीत)–

1. सोहर–

इस लोकगीत में जीवन चक्र के प्रदर्शन संदर्भित किया जाता है। इस बच्चे के जन्म की खुशी में गाया जाता है।

2. कहारवा–

यह विवाह समारोह में कहर जाति द्वारा गाया जाता है।

3. चानाटनी–

एक प्रकार का नृत्य संगीत

4. नौका झक्कड़–

यह नाई समुदाय में बहुत लोकप्रिय है और नाई लोकगीत के नाम से भी जाना जाता है।

5. बनजारा और न्जावा–

यह लोक संगीत ज्ञान के दौरान तेली समुदाय द्वारा गाया जाता है।

6. कजली या कजरी–

यह महिलाओं द्वारा सावन के महीने में गाया जाता है। यह अर्द्ध शास्त्रीय गायन के रूप में भी विकसित हुआ है और इसकी गायन शैली बनारस धराना से मिलती है।

7. जरेवा और सदावजरा सारंगा–

इस तरह के लोक संगीत लोक पत्थरों के लिए गाया जाता है। इन लोक गीतों के अलावा, गजल और दुयरी (अर्द्ध शास्त्रीय संगीत का एक रूप, जो शाही दरबार में बहुत प्रचलित था) अवध क्षेत्र में काफी लोकप्रिय रहा है। जैसे कव्वाली (सूफी स्वर या कविता का एक रूप है, जो भजनों से विकसित हुआ है) और मंगलिया। उसमें से दोनों उत्तर प्रदेश के लोक संगीत का एक मजबूत प्रभाव दर्शाते हैं।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश में प्रचलित विविध प्रकार के लोकगीतों को निम्नवत वर्गीकृत किया जा सकता है।

संस्कार सम्बन्धी गीत

भारतीय संस्कृति में मुख्यतः षोडश संस्कारों की मान्यता है। इन सभी संस्कारों के अवसर पर (अंतिम को छोड़कर) स्त्रियाँ अपने सुमधरु कण्ठ से गीत गाकर अपनी प्रसन्नता एवं उल्लास को प्रदर्शित करती हैं। लगभग प्रत्येक संस्कार से सम्बन्धित गीत पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जनमानस में प्राप्त हुए हैं। जिनका विवरण निम्नवत प्रस्तुत है–

गर्भाधान संस्कार

षोडश संस्कारों में सर्वप्रथम संस्कार गर्भाधान का है। जिसका अर्थ यह है कि यह दम्पत्ति–युग्म अपनी प्रजनन प्रवृत्ति से समाज का सूचित करता हैं। विचारशील लोग यदि उसकी स्थिति इसके लिए अनुपयुक्त समझें तो उन्हें इसके लिए मना भी कर सकते हैं। प्रजनन वैयक्तिक मनोरंजन नहीं वरन् सामाजिक उत्तरदायित्व है। इसलिए समाज में विचारशील लोगों को निमंत्रित कर उनकी सहमति लेनी पड़ती है। यही गर्भाधान संस्कार है।

जिस कार्य के द्वारा पुरूष स्त्री में अपना बीज स्थापित करता है, उसे गर्भाधान संस्कार कहते हैं। शौनक ने भी लिखा है–''जिस कर्म की पूर्ति से स्त्री प्रदत्त शुक्र धारण करती है उसे गर्भाधान कहते है।''

पुंसवन संस्कार

यह संस्कार गर्भ धारण हो जाने पर किया जाता है। इसका अभिप्राय उस कर्म से है जिसके अनुष्ठान से पुत्र संतति का जन्म हो–''युमान् प्रसूयते येन कर्मणा तत्पुंसवनमीरितमु।'' इस अवसर पर गायी जाने वाली ऋचाओं में पुत्र का स्पष्ट उल्लेख किया गया है। पुत्र जन्म देने वाली माता की प्रशंसा की जाती है, अर्थवेद तथा सामवेद में इस प्रकार की प्रार्थनाएँ उपलब्ध होती हैं।

पुंसवन की यह प्रेरणा सभी का शिरोधार्य करनी चाहिये। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 'पुंसवन संस्कार' से सम्बद्ध गीत गाये जाते हैं।

मेरी बरसों से यही अरमान कि

भाभी तेरे लाला होवे

हरवा मैं लूँगी ऐ मेरी भाभी

दूँगी दुआएँ हजार की भाभी

तेरे लाल होवे।

जातकर्म संस्कार

जातकर्म संस्कार जन्म के तुरन्त बाद सम्पन्न होता था। नाभिबंधन से पूर्व वेद मंत्रों के उच्चारण के साथ यह सम्पन्न होता था। प्रायः सभी प्रसव अस्पतालों में या प्रसूतिग्रहों में सम्पन्न होते हैं। अब इस संस्कार का उद्देश्य निर्विध्न प्रसव होने के अतिरिक्त बालक को शूरवीर, यशस्वी, वर्चस्वी बनाने का था। जातकर्म संस्कार के अवसर पर होने वाली एक क्रिया यह भी थी कि आर्य संतान के जन्म लेते ही उसकी जिव्हा पर स्वर्ण की सलाई से घृत एवं मधु से ''ओम'' लिखा जाता था।

छठवें दिन ग्रह–शुचि और स्नान का संस्कार होता है। इस दिन जच्चा–बच्चा को स्नान कराया जाता है। उसे ''छठी'' कहते हैं। इस अवसर पर जन्म सम्बन्धी गीत गाये जाते हैं। जैसे जच्चा सोहर इत्यादि।

लाल मैंने बड़े दुखन से पाये री नेक मइया। कह कह टेरो।।

पहले लाल मेरे पैदा हुए हैं। अर रर रर मैंने रूठी सास मनायी रे, नेक मइया कह कह टेरो।।

नामकरण संस्कार

शिशु जन्म के दसवें दिन या ग्यारहवें दिन तथा कहीं कहीं पर इक्कीसवें दिन नामकरण संस्कार होता है जिसे ''दण्ठौन'' कहा जाता है। इसी दिन कुंआ पूजन का संस्कार गाजे–बाजे के साथ मनाया जाता है। दण्ठौन का अवसर पौराहित्य सम्बन्धी संस्कार होता है। पुरोहित आकर यज्ञ आदि करता है और बालक का नामकरण करता है। गाँठ जोड़कर पति–पत्नि बैठते हैं। इसे तगा बांधने का संस्कार कहा जाता है। पत्नी के मायके से भेंट आती है जैसे 'छोछक' या 'पछ' कहा जाता है। इस अवसर पर पहले पत्नी की ससुराल वालों की ओर से सूचना, तिल, चावल और गुड़ भेंट कर दी जाती है। साथ में 'अगिया' भी जाती है। इसे तिलचामरी कहते हैं। तभी पत्नी के मायके से भेंट आती है। इस प्रकार पुत्र जन्म से लेकर दस दिन तक यह संस्कार चलता है।

नामकरण संस्कार के अवसर पर स्त्रियाँ विविध प्रकार के लोकगीत गाती हैं–

रूपईया मांगे ननदी लाल की बधाई,

एक रूपईया मेरे ससुर की कमाई।

अठन्नी ले जा ननदी लाल की बधाई।।

निष्क्रमण संस्कार

नवजात शिशु को विधि–विधा के साथ प्रथम बार गृह से बाहर लाने की विधि का नाम निष्क्रमण है तत्सम्बद्ध संस्कार निष्क्राम संस्कार है। यह चौथे माह में होने वाला संस्कार है। बालक को घर से निकालकर सूर्य का दर्शन करते हैं।

अन्नप्राशन संस्कार

बालक की शरीर वृद्धि के साथ ही उसे पौष्टिक भोजन की आवश्यकता होती है। माँ के द्वारा मिलने वाले दुग्ध से उसकी पूर्ण तृप्ति न होने के कारण तथा माँ के शरीर को स्वस्थ रखने की भावना के साथ ही इस संस्कार का उदय हुआ है। ''सुश्रुत संहिता'' नामक आयुर्वेदिक ग्रन्थ में शिशु को षष्ठ मास में पथ्य भोजन देने का विधान मिलता है।

चूडाकर्म संस्कार

सिर के बाल जब प्रथम बार उतारे जाते हैं, तब वह चूडाकर्म या मुण्डन संस्कार कहलाता है। यह समारोह इसलिये महत्वपूर्ण है कि मस्तिष्कीय विकास एवं सुरक्षा पर इस समय विशेष विचार किया जाता है और वह कार्यक्रम भी। शिशु के सिर के बाल जब पहली बार उतारे जाते हैं तो लौकिक रीति यह प्रचलित है कि मुण्डन बालक की आयु एक वर्ष की होने तक करा लें अथवा दो वर्ष पूरे होने या तीसरे वर्ष में कराना चाहिये।

कर्णवेध संस्कार

कानों का छेदा जाना सुदूर अतीत में केवल सौन्दर्य के प्रसाधन के रूप में ही था किन्तु परवर्ती काल में इसकी कुछ उपयोगिता सिद्ध हो जाने के कारण इसकी आवश्यकता पर बल देने के लिये धार्मिक आवरण में आवृत्त कर दिया गया। सुश्रुत संहिता का कथन है कि रोगादि से बचाना तथा भूषण अथवा अलंकरण के निमित्त बालक के कानों का छेदन करना चाहिए।

विद्यारम्भ संस्कार

बालक के शिक्षा ग्रहण के योग्य हो जाने पर विद्यारम्भ संस्कार कराया जाता था। इसी को दूसरे शब्दों में अक्षरारम्भ कहा जाता था। सर्वप्रथम स्मृत्तियों में ही इस संस्कार का उल्लेख मिलता है। इसका आरम्भ मुण्डन संस्कार के साथ ही किया जाता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से भी इसी विचारधारा की पुष्टि होती है। बालक स्नानादि से पवित्र होकर गणेशजी, सरस्वतीजी, ग्रहदेवता, लक्ष्मीनारायण आदि की स्तुति के साथ गुरू के सम्मुख बैठकर अक्षरों को तीन बार पढ़ता था। विद्यारम्भ संस्कार आरम्भ करते हुए बच्चों से गणेशजी एवं सरस्वतीजी का पूजन कराया जाता है।

उपनयन (यज्ञोपवीत) संस्कार–

गुरू के समीप ले जाना इस अर्थ का यह बोधक शब्द एक सुदीर्घ ऐतिहासिक परम्परा को आत्म्साात् किए हुए है। अथर्ववेद में इस शब्द का प्रयोग ब्रह्मचारी को ग्रहण करने के अर्थ में किया गया है। किन्तु इस शब्द का वास्तविक अर्थ आचार्य द्वारा आगत शिष्य को दीक्षादान है। ब्राह्मणकाल में ही यही मान्यता बनी रही और सूत्रकाल में भी यही स्थिति रही। किन्तु परवर्तीकाल में गायत्री मंत्र द्वारा द्वितीय जन्म के अर्थ में उपनयन शब्द रूढ़ हो गया है। मनु और याज्ञवल्क्य, उपनयन संस्कार से बालक का द्वितीय जन्म मानते है।

वेदारम्भ संस्कार

प्राचीन काल में उपनयन संस्कार के साथ ही वेदों का अध्यनाध्यापन

प्रारम्भ हो जाता था, किन्तु परवर्ती काल में संस्कृत बोलचाल की भाषा नहीं रही तो उपनयन केवल दैहिक संस्कार मात्र रह गया।

केशांत अथवा गोदान–

इस संस्कार में ब्रह्मचार की श्मश्रुओं का सर्वप्रथम क्षौर किया जाता था। इसे गौदान संस्कार भी कहते हैं क्योंकि इस अवसर पर आचार्य को गौ का दान दिया जाता था। इस संस्कार की मान्यता के सम्बन्ध में अनेक आचार्यों मं विभिन्न विवाद है। कोई कोई आचार्य चूडाकर्म के साथ भी इस संस्कार को सम्बद्ध करते हैं। इस अवसर पर भक्ति सम्बन्धी गीत गाये जाते हैं।

समावर्तन संस्कार– वीर मित्रोदय में समावर्तन का अर्थ है– तत्र समावर्त्तनं नाम वेदाध्ययनान्तरम् गुरूकुलाद् स्वगृहामनम्, अर्थात् वेदाध्ययनान्तरम् अर्थात् वेदाध्ययन के उपरांत गुरूकुल से अपने घर को प्रत्यावर्तन का नाम समावर्तन है।

इस अवसर पर भी भक्ति सम्बन्धी गीत गाये जाने का प्रावधान पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जनमानस में हैं–

कहती मइया सुनो कन्हैया।

दूर खेलन मत जइयो है कोई नाग का नथईया।।

कहती मइया . . .

विवाह संस्कार–

समस्त संस्कारों में विवाह का महत्वपूर्ण स्थान है। विवाह दो आत्माओं का पवित्र बंधन है। दो प्राणी अपने अलग अस्तित्वों को समाप्त कर एक सम्मिलित इकाई का निर्माण करते है। स्त्री पुरूष दोनों में परमात्मा ने कुछ विशेषतायें और कुछ अपूर्णतायें रखी हैं। इसलिए विवाह सम्मिलन से वे एक दूसरे की अपूर्णताओं को अपनी विशेषताओं से पूर्ण करते हैं। इनसे एक समग्र व्यक्तित्व का निर्माण होता है। इसलिए विवाह को सामान्यतयाः मानव जीवन की एक आवश्यकता माना गया है।

विवाह गीतों का आरंभ लगुन गीतों से होता है–

रघुनन्दन फूले न समाये, लगुन आयी हरे हरे।

वानप्रस्थाश्रम प्रवेश संस्कार–

प्राचीन भारतीय मान्यता के अनुसार यहाँ चार आश्रमों की पूर्ण प्रतिष्ठा थी, ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास।

अंत्येष्टि संस्कार–

मानव शरीर इस धरती की सबसे बड़ी ईश्वरीय विभूति है। भगवान ने इसे बनाने में असाधारण श्रम किया है, और इसे सर्वागपूर्ण बनाने में कोई कमी नहीं की है। यह परब्रह्म की सर्वोपरि कलाकृति है। मस्तिष्क में उठने वाले विचारों और अन्तःकरण में उठने वाले भावों की क्षमता इतनी अधिक होती है कि उनके आधार पर मनुष्य देवोपन आनन्द एवं उल्लास अनुभव कर सकता है।

रूदन लयात्मक होता है। उनमें से एक गीत निम्नलिखित है जिसकी कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

जिसके कागज हो चुके हैं, जो खुदा घर जा रहा है,

मइया रोवें सिर पकड़ के, लालमेरे जा रहे हैं।

मइया अपना दूध बख्शो, मैं खुदा घर जा रहा हूँ।।